International Journal of Sanskrit Research 2020; 6(3): 128-131

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2020; 6(3): 128-131
© 2020 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 01-03-2020
Accepted: 07-04-2020

डॉ. रमा सिंह
सह-आचार्या, देशबन्धु महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, कालकाजी, नई दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
डॉ. रमा सिंह
सह-आचार्या, देशबन्धु महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, कालकाजी, नई दिल्ली, भारत

वैराग्यशतक में वर्णित रस व गुणरीति विवेचन

डॉ. रमा सिंह

सारांश
महाकवि भर्तृहरि की महनीय कृति 'वैराग्यशतक' शतक काव्यों का प्रतिनिधि ग्रंथ है। सरस, सरल, स्वाभाविक एवं प्रवाहपूर्ण भाषाशैली में रचित यह ग्रंथ संसार की निस्सारता को प्रकट करता हुआ वैराग्य को श्रेष्ठ व कल्याणकारी सत्य एवं तथ्य के रूप में स्वीकार करता है। वैराग्य का विवेचन होने से यहाँ शान्तरस को अङ्गीरस के रूप में निरूपित किया गया है। भाषा भावानुकूल है तथा कवि ने माधुर्यगुण एवं वैदर्भी रीति का आश्रय लिया है। प्रस्तुत शोधलेख के माध्यम से काव्यगत उक्त तत्त्वों से परिचित करना ही मुख्य उद्देश्य है।

कूटशब्द : भर्तृहरि, वैराग्यशतक, शान्त, वैदर्भी, माधुर्य, नि:श्रेयस्, सत्साहित्य, शृंगार।

प्रस्तावना

रस व गुणरीतिविवेचन:

महाकवि भर्तृहरि द्वारा रचित वैराग्यशतक कवि की सर्वोत्कृष्ट रचना मानी जाती है। वैराग्यशतक में वर्णित ज्ञान भर्तृहरि के योगी होने का प्रमाण माना जाता है। वर्णन इतने स्वाभाविक एवं यथार्थ हैं जिसे आत्मस्थ योगी ही प्रकट कर सकते हैं। कवि ने शुद्ध सत्साहित्य का सृजन कर वैराग्य को नि:श्रेयस की प्राप्ति का साधन बताया है।

वैराग्य की भावना से ओत-प्रोत होने के कारण यह शतक शान्त रस की पुष्टि करता है। गुण और रीति की दृष्टि से यहाँ माधुर्य गुण एवं वैदर्भी रीति का आश्रय लिया गया है। भारतीय साहित्य में शान्त रस को लेकर विवाद है, किन्तु आचार्य भरत ने भी शान्तरस की सम्भावना से इंकार नहीं किया है। परमज्ञान को प्राप्त कर मनुष्य उस ब्रह्म में लीन हो जाता है। यह वर्णन सहृदयों के हृदय को आनन्दित करता है। आत्मा को तृप्त एवं शान्त करता है। इसलिए शान्त रस को निसंदेह रस की श्रेणी में रखा जा सकता है। भरतसहित परवर्ती आचार्यों ने इस सत्य को स्वीकार किया है।

रसविवेचन:

वैराग्यशतक का अङ्गी रस शान्त है। निर्वेद अथवा शम स्थायी भाव वाला शान्त रस कहा जाता है।[1] भक्त, योगीगण अथवा उत्तम प्रकृति वाले इसके आश्रय होते हैं। अराध्य देव एवं ब्रह्म इसके आलम्बन विभाव होते हैं। आश्रय की चेष्टाएँ अनुभाव होती हैं। अनित्यत्व दु:खमयत्वादि रूप से संपूर्ण संसार की असारता का ज्ञान अथवा परमात्मा का स्वरूप आलम्बन विभाव होता है। ऋषि आदिकों के पवित्र आश्रम, हरिद्वारादि पवित्र तीर्थ, रमणीय एकान्तवन तथा महात्माओं का संगादि उद्दीपन विभाव होते हैं। रोमाञ्चादि अनुभाव होते हैं।

[1] (क) निर्वेदस्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रस:। – काव्यप्रकाश, 4/35
(ख) शान्त: शमस्थायिभाव उत्तमप्रकृतिर्मत:। – साहित्यदर्पण, 3/245

निर्वेद, हर्ष, स्मरण, मति, प्राणियों पर दयादि इसके सञ्चारीभाव हैं। शान्त रस के अंगी रस होने से यहाँ शान्तरस के उदाहरण बहुतायत रूप में उपलब्ध हैं। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं। यथा –

आयुः कल्लोललोलं कतिपयदिवसस्थायिनी यौवनश्री-
रर्थाः सङ्कल्पकल्पा घनसमयतडिद्विभ्रमा भोगपूगाः।
कण्ठाश्लेषोपगूढ तदपि च न चिरं यत् प्रियाभिः प्रणीतं
ब्रह्माण्यासक्ताचित्ता भवत भवमयाम्भोधिपारं तरीतुम्।।[2]

जीवन (की) ऊँची तरंगों की तरह तुरन्त नष्ट होने वाली है यौवन की सुन्दरता, कुछ ही अर्थात् थोड़े दिनों तक रहने वाली है। धान-धान्य-धाम-ग्राम पशु आदि पदार्थ मनोरथ के समान अस्थिर है। सारे भोग वर्षाकालिक मेघों के बीच की बिजली के विलास की तरह है और प्रौढ़ प्रियाओं द्वारा किया गया कण्ठालिङ्गन भी क्षणिक है। अतः संसार के भय रूप सागर के पार तक तैर कर जाने के लिए ब्रह्मा में अपने मन को लीन कीजिए।

मोक्ष का अभिलाषी पुरुष आश्रय है। ब्रह्म आलम्बन विभाव है। तरह-तरह के उपाय क्षमा, तपश्चरण आदि अनुभाव है। तत्तत् कर्म का फल मोक्ष न होना, संसार का सुख क्षणभंगुर होना आदि इस भाव को उद्दीप्त करते हैं। निर्वेद व्यभिचारी भाव है।

एक और उदाहरण इस तरह की पुष्टि करता है। यथा –

जीर्णा एव मनोरथाश्च हृदये यातं च तद्यौवनं
हन्ताङ्गेषु गुणाश्च बन्ध्यफलतां याता गुणज्ञैर्विना।
कि युक्तं सहसाऽभ्युपैति बलवान् कालः कृतान्तोऽक्षमी
हा! ज्ञातं मदनान्तकाङ्घ्रियुगलं मुक्त्वास्ति नान्यो गतिः।।[3]

कामनाएँ मन में ही लुप्त हो गयी। वह यौवन भी चला गया। गुणग्राहकों के बिना विद्या-विनय आदि गुण शरीर में ही निष्फल हो गए। यह बड़े खेद का विषय है। बलि काल स्वरूप-असहनशील यम अकस्मात् प्राण लेने के लिए आ पहुँचता है तो अब क्या उचित है? हाँ ध्यान आया कि शिवजी के चरण-युगल को छोड़कर दूसरी कोई वस्तु शरण नहीं। संसार से उद्धार पाने के लिए बस केवल शिवजी के चरण ही रक्षण करने वाले हैं।

शिवजी का 'भक्त' यहाँ आश्रय है। शिवचरण आलम्बन है। क्योंकि वह मोक्षप्रदाता है। मनोरथों का क्षीण होना आयु का समाप्त होना आदि द्वारा भक्त का शिव चरणों में नमन आदि अनुभाव है। आयु क्षणभंगुर है। सुख आदि दुःख का हेतु है। ये सब शम नामक स्थायी भाव को उद्दीप्त कर रहे हैं। निर्वेद व्यभिचारी भाव है।

एक अन्य उदाहरण, यथा –

ब्रह्मेन्द्रादिमरुद्गणाँस्तृणकणान् यत्र स्थितो मन्यते
यत्स्वादाद्विरसा भवन्ति विभवास्त्रैलोक्यराज्यादयः।
भोगः कोऽपि स एव एक परमो नित्योदितो जृम्भते
भोः साधो। क्षणभङ्गुरे तदितरे भोगे रतिं मा कृथा।।[4]

सर्वाधिक नित्य जिस भोग में स्थित पुरुष ब्रह्मा, इन्द्र, प्रभृति देवतागणों को तृण के कण अर्थात् निःसार मानता है, जिसका स्वाद अर्थात् आनन्द प्राप्त करने से त्रिभुवन के राज्य रूपी सम्पत्तियाँ उसे नीरस प्रतीत होती हैं, वह कोई अपूर्व नित्य कल्याणकारी एक ही भोग 'ब्रह्मानन्द' बढ़ता ही जाता है। इसलिए क्षण में नष्ट होने वाले सांसारिक भोग में आसक्ति मत करो।

यहाँ योगी पुरुष आश्रय है। ब्रह्म आलम्बन है। ब्रह्मानन्द के अतिरिक्त अन्य सभी सांसारिक भोग क्षणभंगुर है। यह शम नामक स्थायी भाव को उद्दीप्त करता है। योगी द्वारा अन्य को तृण समान मानकर ब्रह्म में आसक्ति आदि अनुभाव है। इस प्रकार विभाव, अनुभाव और संचारी के संयोग से यह शम नामक स्थायी भाव शान्त रस की पुष्टि करता है। वैराग्यशतक का प्रत्येक पद्य शान्त रस से आप्लावित है। उदाहरण रूप में कतिपय पद्यों को उल्लेखकर शान्तरस की पुष्टि की गयी है।

महाकवि भर्तृहरि ने सांसारिक सुखों की अस्थिरता तथा मानव जीवन की दुःखमयता का प्रभावोत्पादक चित्रण किया है। तदनुसार सन्तोष को परम धन और वैराग्य को इसका साधन माना है। वैराग्य की भावना से ओत-प्रोत पद्य शान्त रस का पूर्णरूपेण निर्वाह करते हुए काव्य की रसमयता को द्योतित करते हैं।

महाकवि भर्तृहरि का वैराग्यशतक उनके दार्शनिक विचारों को व्यक्त करता है। संसार की असारता को द्योतित करता है। यहाँ वैराग्य को इस जीवन का मूल बताया गया है और संसार रूपी सागर को पार करने का साधन बताया गया है। यह सम्पूर्ण संसार दुःख का कारण है, क्योंकि भाईबन्धु से जितना मोह होगा उतना ही दुःख अधिक हो जायेगा। ज्ञान रूपी प्रदीप इस मोह रूपी अन्धकार का विनाशक बताया गया है।

दार्शनिक विचारों द्वारा वे जीव और ब्रह्म दो तत्त्वों को स्वीकार करते हैं। अन्त में ब्रह्म में एकाकार की भावना को व्यक्त करते हैं। स्वाभाविक तथ्यों के चित्रण द्वारा भाषा की स्वाभाविकता एवं सरलता द्रष्टव्य है। भाषा में छोटे-छोटे समासों द्वारा बात को स्पष्ट किया गया है। मधुर वर्णों द्वारा शब्दावली को माधुर्य गुण प्रदान किया गया है। सभी गुणों में स्वाभाविक रूप से व्याप्त सरल एवं प्रभावोत्पादक शैली वाली वैदर्भी रीति को काव्य का आधार बताया गया है। भाषा के प्रवाह का यह सुन्दर उदाहरण है। यथा –

भोगास्तुङ्गतरङ्गभङ्ग तरलाः प्राणाः क्षणध्वसिनः
स्तोकान्येव दिनानि यौवनसुखस्फूर्तिः प्रियासु स्थिता।
तत्संसारमसारमेवनिखिलं बुद्धवा बुधा बोधका,
लोकानुग्रहपेशलेन मनसा यत्नः समाधीयताम्।।[5]

सांसारिक वस्तुओं के भोग से उत्पन्न सुख ऊँची उठने वाली लहरों के भङ्ग के समान, चंचल अर्थात् अस्थिर है। प्राण भी क्षण में नष्ट होने

[2] वैराग्यशतक, श्लोक-36
[3] वही, श्लोक-83
[4] वैराग्यशतक, श्लोक-40
[5] वही, श्लोक-34

वाले हैं। प्रियतमा से सम्बद्ध रहने वाली जवानी के आनन्द-स्फूर्ति भी कुछ ही दिनों तक रहती है। इस कारण से उपदेश देने वाले विद्वानों! सारे संसार को सारहीन समझकर लोगों पर दया करने में लीन मन से सत्य तत्त्व के उपदेश में प्रयत्न कीजिए।
कितना सुन्दर एवं स्वाभाविक वर्णन है।
एक और उदाहरण इनकी भाषा के प्रवाह एवं वर्णों की उपयुक्तता को पुष्ट करता है। समास छोटे-छोटे एवं सरल हैं। यथा -

आयुः कल्लोललोलं कतिपयदिवसस्थायिनी यौवनश्री-
रर्थाः सङ्कल्पकल्पा घनसमयतडिद्विभ्रमा भोगपूगाः।
कण्ठाश्लेषोपगूढ़ तदपि च न चिरं यत् प्रियाभिः प्रणीतं
ब्रह्माण्यासक्ताचित्ता भवत भवमयाम्भोधिपारं तरीतुम्।।[6]

सांसारिक सुख जल की लहरों के समान तुरन्त भंग होने वाले हैं, यौवन की सुन्दरता कुछ दिनों तक ही रहने वाली है। अर्थ यानि धन-धान्य, धाम-ग्राम पशु आदि पदार्थ मनोरथ के समान अस्थिर है, सारे भोग वर्षाकालिक मेघों के बीच में स्थित बिजली के विलास की तरह क्षणिक है। प्रौढ़ प्रियाओं द्वारा किया गया आलिंगन भी क्षणिक है। अतः संसार के भय रूप सागर के पार तक जाने के लिए ब्रह्मा को अपने मन में बसाइए अर्थात् ब्रह्मा में मन को लीन करिये।

आयुः कल्लोललोलम् आदि वर्ण भाषा की कोमलता व प्रवाहमयता की द्योतक है।

गुणविवेचन :
माधुर्यगुण के विषय में कहा जाता है कि जिसमें अन्तःकरण द्रुत हो जाये, ऐसा आनन्द-विशेष माधुर्य कहलाता है। माधुर्य गुण संभोग श्रृंगार की अपेक्षा करुण रस में, करुण रस की अपेक्षा वियोग में, वियोग श्रृंगार की अपेक्षा शान्त रस में क्रमशः अधिकाधिक होता जाता है। इसमें अपने शिर पर स्थित अपने-अपने वर्ग के अन्तिम वर्ण से युक्त, टवर्ग को छोड़कर शेष स्पर्शवर्ण (क से म तक), ह्रस्व रकार और णकार एवं सानुनासिक वर्ण तथा कोमल वर्णों का ही प्रयोग होता है। स्वल्पसमास वाली एवं समास रहित रचना भी माधुर्य का व्यंजक है। उदाहरण है -

उत्खातं निधिशंकया क्षितितलं ध्माता गिरेर्धातवो,
निस्तीर्णः सरितां पतिर्नृपतयो यत्नेन सन्तोषिताः।
मन्त्राराधनतत्परेण मनसा नीताः श्मशाने निशाः
प्राप्तः काणवराटकोऽपि न मया तृष्णे! सकामा भव।।[7]

यहाँ 'खजाना मिलेगा' इस आशा से भूमि को खोद डाला, पहाड़ी धातुओं को आग में फूंका, समुद्र को पार किया, बड़े परिश्रम से राजा आदि श्रीमानों को सन्तुष्ट किया, सिद्धिप्रदायक मन्त्रों की उपासना में तत्पर मन के द्वारा शमशान में भी कितनी निशाएँ बितायीं पर हे चाह! मैंने फूटी कौड़ी भी न पायी, इसलिए तुम सफल या प्रसन्न हो जावो। यहाँ पर त्, न्, ण् आदि वर्णों से माधुर्य गुण अभिव्यक्त हो रहा है। साथ ही अल्पसमास वाली रचना इस माधुर्य को और अधिक पुष्ट करती है। दूसरा उदाहरण है -

गङ्गातरङ्गकण शीकर - शीतलानि,
विद्याधराध्युषित - चारुशिलातलानि।
स्थानानि किं हिमवतः प्रलयं गतानि
यत्सावमानपरपिण्डरता मनुष्याः।।[8]

गंगा जी की तरंगों की बूँदों और बर्फ से शीतल, गन्धर्व जाति विशेष विद्याधरों के बैठने से सुन्दर चट्टानों वाले हिमालय पर्वत के स्थान क्या नष्ट हो गए हैं जिस कारण से मनुष्य अपमान से पूर्ण दूसरों के अन्न की प्राप्ति में लीन हो रहे हैं। अर्थात् पहाड़ी सुन्दर स्थानों को छोड़कर अपमानजनक स्थानों में लोगों का जाना अच्छा नहीं। यहाँ पर ङ्, ण्, त्, न् वर्णों के द्वारा माधुर्य का बोध हो रहा है।

रीति विवेचन :
माधुर्य व्यंजक वर्णों के अधिकता वाला, छोटे-छोटे समासों वाला काव्य वैदर्भी रीति से ओत-प्रोत रहता है। वैराग्यशतक में कवि ने वैदर्भी रीति का आश्रय लिया है। कतिपय उदाहरण दर्शनीय हैं -

आयुर्वर्षशतं नृणां परिमितं रात्रौ तदर्धं गतं
तस्यार्धस्य परस्य चार्धमपरं बालत्ववृद्धत्वयोः।
शेषं व्याधिवियोगदुःखसहितं सेवादिभिर्नीयते,
जीवे वारितरंगचंचलतरे सौख्यं कुतः प्राणिनाम्।।[9]

मनुष्य का जीवन सौ वर्ष तक सीमित है। उसका आधा वर्ष तो सोते हुए व्यर्थ कट जाते हैं। 25 वर्ष बचपन और बुढ़ापे में बीत जाते हैं। 25 वर्ष रोग और वियोग में कट जाते हैं। अतः जल की लहरों के समान चंचल अर्थात् क्षणिक इस जीवन में प्राणियों को सुख कहाँ अर्थात् सबकुछ दुःखमय है।
इसमें र्, त्, ण्, न् आदि वर्णों के द्वारा माधुर्य की व्यंजना हो रही है। लघुसमास वाली पदावली है। वैदर्भी रीति का एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है -

मोहं मार्जय तामुपार्जय रतिं चन्द्रार्धचूडामणौ,
चेतः स्वर्गतरङ्गिणीतटभुवामासङ्गमङ्गीकुरु।
को वा वीचिषु बुदबुदेषु च तडिल्लेखासु च श्रीषु च
ज्वालाग्रेषु च पन्नगेषु सरिद्वेगेषु च च प्रत्ययः।।[10]

6 वैराग्यशतक, श्लोक-36
7 वही, श्लोक-3
8 वैराग्यशतक, श्लोक-24
9 वही, श्लोक-49
10 वही, श्लोक-64

मोह को छोड़ दो, महादेव जी में मन को लगाओ, और गंगा जी के तट पर वास करो। इस संसार में जल की तरंगों, पानी के बुलबुलों, बिजली की चमक, आग की लौ, साँपों और मित्रों का कोई विश्वास नहीं है।

यहाँ म्, ज्, र्, त्, ह्, न् आदि माधुर्य व्यंजक वर्णों का प्रयोग सुन्दरता से किया गया है।

जीर्णा एवं मनोरथाश्च हृदये यातं च तद्यौवनं
हन्ताङ्गेषु गुणाश्च बन्ध्यफलतां याता गुणज्ञैर्विना
किं युक्तं सहसाऽभ्युपैति बलवान् कालः कृतान्तोऽक्षमी
हा। ज्ञातं मदनान्तकाङ्घ्रियुगलं मुक्त्वास्ति नान्योः गति।।[11]

यहाँ पर महाकवि भर्तृहरि ने वृद्धावस्था में काल द्वारा ग्रसित किये जाने पर भगवान शिव का आश्रय लेने को कहा है।

इस पद्य का व्यंग्यार्थ है कि अन्त समय आने पर तो पछताना ही पड़ेगा किन्तु आयु रहते मनुष्य को इस सत्य को जान लेना चाहिए और शिव के चरणों की भक्ति करनी चाहिए जिससे अन्त समय में काल का भी भय नहीं रहे। मोक्ष की प्राप्ति होगी। सांसारिक वैभव प्रेय है और आत्मचिन्तन श्रेय है।

रम्याश्चन्द्रमरीचयस्तृणवती रम्या वनान्तस्थली
रम्यं साधुसुहृत्समागतसुखं काव्येषु रम्याः कथाः।
कोपोपाहितबाष्पविन्दुतरलं रम्यं प्रियाया मुखं
सर्वं रम्यमनित्यतामुपगते चित्ते न किंचित्पुनः।।

अर्थात् चाँदनी रातें सुहावनी होती हैं, हरे-भरे मैदान मन को बहुत भाते हैं। सत्संग से सुख मिलता है, काव्यश्रवण से रस मिलता है। आँसुओं से, रूठी प्रिया के मुख की शोभा बढ़ती है। यह सब ठीक होने पर जब इनकी अस्थिरता अथवा क्षणभंगुरता का ज्ञान हो जाता है तो सबसे मन दूर जाता है।[12] यहाँ पर मन का विषयों से हटना रूप अर्थ उस मनुष्य के ज्ञानरूपता (ब्रह्मनिष्ठता) का बोध कराता है। इस प्रकार महाकवि भर्तृहरि व्यंग्यार्थ द्वारा संसार की निस्सारता को द्योतित करते हैं और ज्ञानस्वरूप ब्रह्म को ही आनन्दस्वरूप कह रहे हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त उदाहरणों द्वारा ज्ञात होता है कि भर्तृहरि का भाषा पर पूर्णरूपेण अधिकार था। वे भाषा को भावानुकूल एवं स्वाभाविक रूप से प्रयुक्त करते हैं। यही गुण काव्य की उत्तमता का द्योतक है। निष्कर्षतः महाकविरचित वैराग्यशतक में रस की योजना का सुन्दर निर्वहण किया गया है तथा गुणरीति का सफल सम्पादन हुआ है। भाषा सहृदयग्राह्य एवं स्वाभाविक प्रवाह से युक्त है।

सन्दर्भ

1. काव्यप्रकाश, सम्पादक - डॉ. नगेन्द्र, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, प्रथम संस्करण, विक्रम संवत्-2017.
2. काव्यालङ्कार, आचार्य भामह, भाष्यकार - शर्मा, देवेन्द्रनाथ, बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, द्वितीय संशोधित संस्करण, 1985.
3. ध्वन्यालोक, सम्पादक - पं. दुर्गाप्रसाद, मुंशीराम मनोहरलाल दिल्ली, 1983.
4. भर्तृहरिशतकत्रयम्, व्याख्याकार - झा, नरेश, होसिंग, जगन्नाथ शास्त्री एवं त्रिवेदी, राधेलाल, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, संस्करण-2008 ई.
5. भारतीय साहित्य का इतिहास, लेखक - विण्ट्रनिट्ज, अनूदित - झा, सुभद्रा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1978.
6. शतकत्रयम्, भर्तृहरि, संपादक - कोसाम्बी, श्रीदामोदर धर्मानन्द, भारतीय विद्या ग्रन्थावली, भारतीय विद्याभवन, बम्बई, 1946.
7. संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, उपाध्याय, रामजी, रामनारायण लाल, वेणीमाधव, इलाहाबाद, 1961.
8. संस्कृत साहित्य का इतिहास, उपाध्याय, आचार्य बलदेव, शारदा निकेतन, वाराणसी, दशम संस्करण, 2001.
9. संस्कृत साहित्य का इतिहास, गैरोला, वाचस्पति, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, 1978.
10. संस्कृत साहित्य का इतिहास, शर्मा, उमाशंकर, चौखम्बा भारती अकादमी, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2014.
11. साहित्यदर्पण, व्याख्याकार - शास्त्री, शालिग्राम, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, नवम संस्करण, 1977002
12. A History of Sanskrit Literature, Keith, A.B., Oxford University Press, London; c1920.
13. Nīti and Vairāgya Śatakas of Bhartṛhari, by Kāle, M.R., Motilal Banarsidas, Delhi, Seventh Edition-1971.s

[11] वैराग्यशतक, श्लोक-83

[12] वही, श्लोक-79